अनुशासन के सन्दर्भ में भारतीय पाश्चात्य दृष्टिकोण

डा. शिवम् श्रीवास्तव
असोसिएट प्रोफ़ेसर – शिक्षाशास्त्र विभाग,
किसान पी. जी. कालेज बहराइच
शन्नू चौधरी
छात्रा - शिक्षाशास्त्र विभाग,
किसान पी. जी. कालेज बहराइच

सारांश

अनुशासन के सन्दर्भ में भारतीय और पाश्चात्य दोनों ही दृष्टिकोणों से यह बात तो पूरी तरह से स्पष्ट होती है कि अनुशासन की भावना उत्पन्न करने बालक के जीवन में शिक्षक का सर्वाधिक महत्व है| सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया में शिक्षक की भूमिका सर्वोपरि है | यह भी सत्य है कि शिक्षक जब तक स्वयं अनुशासित नहीं है वह बालक में अनुशासन की भावना जागृत करने में सफल नहीं हो सकता है | भारतीय दृष्टिकोण से अनुशासन से आत्मा की उन्नति होती है आत्मानुशासन ही वास्तविक अनुशासन है | वाह्य अथवा दमनात्मक अनुशासन का कोई महत्व नहीं है | पाश्चात्य दृष्टिकोण की यदि बात की जाय तो यहाँ भी सर्वोत्कृष्ट है पर अनुशासन को बनाये रखने में आंशिक दण्ड की आवश्यकता भी है | प्रभावात्मक अनुशासन एवं सम्यक दण्ड व्यवस्था को पाश्चात्य विचारधारा महत्व प्रदान करती है | "हमारे द्वारा किये गए ऐसे कार्य एवं व्यवहार जिसमें सकारात्मक सार्थकता की स्पष्ट छाप दिखाई दे और उसमे सामाजिक स्वीकृति की छवि प्रतिविम्बित हो वही अनुशासन है |"

सम्पूर्ण विश्व में आध्यात्मिक चेतना विखेरने में भारतवर्ष सदैव अग्रणी रहा है | यहाँ हम "अनुशासन" के सम्बन्ध में भारतीय भारतीय दृष्टिकोण का उल्लेख (सर्वप्रथम गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर से विचारो से कर रहे है-भारतीय दार्शनिक, चिन्तक गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर जी के सन्दर्भ में हम यह कह सकते है कि गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर जी प्रकृति प्रेमी एवं आदर्शवादी थे, अनुशासन को वे बहुत महत्व देते थे, किन्तु वे वाह्य अनुशासन कि अपेक्षा आंतरिक अनुशासन पर बल देते थे | इस आंतरिक भावना के विकास के लिए वे दण्ड व्यवस्था का विरोध करते थे, इनका स्पष्टीकरण था कि दण्ड से छात्र उद्दण्ड होते है उनमे विरोध की भावना का विकास होता है | गुरुदेव जी आत्मानुशासन के पक्ष में थे और उसकी प्राप्ति के लिए वे उच्च शिक्षा में सामाजिक पर्यावरण की आवश्यकता पर बल देते थे |इनका स्पष्ट दृष्टिकोण था कि यदि विद्यालयों के शिक्षक ज्ञानी एवं चरित्रवान हैं एवं बच्चो के साथ प्रेम और सहनुभूतिपूर्ण व्यवहार करते हैं तो बच्चे स्वयं अनुशासन का पालन करेंगे | अनुशासन के विकास के लिए गुरुदेव जी यह भी आवश्यक समझते थे कि विद्यालयों में खेल-कूद तथा साहित्यिक एवं सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन हो | इनका अनुभव था कि उच्च सामाजिक पर्यावरण में ही मनुष्य को साधना के अवसर मिलते है और वह अनुशासन में रहना सीखता है,,

ऐसे पर्यावरण में छात्र स्वयं अनुशासित रहते हैं और यदि उनसे कोई भूल होती है तो वे स्वयं उसे दूर करते है | गुरुदेव द्वारा स्थापित 'विश्व भारती' का सम्पूर्ण परिवेश संस्कार प्रधान है, शिक्षक और छात्र सभी सादा जीवन जीते हैं और सभी पूर्णरूप से अनुशासित रहते हैं | **(1)**रविन्द्र नाथ टैगोर जी समाज के समस्त आचरणों को बालक पर बलपूर्वक थोपना नहीं चाहते, परन्तु वे यह भी नहीं चाहते कि बालक को कोई सामाजिक आचरण सिखाया ही नहीं जाय |

टैगोर जी का मानना था कि अनुशासन हेतु विद्यालय का वातावरण (भौतिक तथा सामाजिक) इस प्रकार अनुकूलित और उद्दीपित बनाया जाय जिसमे चरित्र का विकास बिना वाह्य आरोपण के स्वतः होता जाय | उन्होंने अपने एक प्रयोग का उल्लेख किया है, जिसमे देहात से कुछ बालक आकर शान्ति निकेतन में प्रवृष्टि हुए | गाँव के अपेक्षित वातावरण के कारण शरीर और बुद्धि से दुर्बल थे तथा उनका व्यवहार शिष्ट नहीं था | फिर भी उनके स्वभाव में नीचता, स्वार्थपरता या कृतघ्नता नहीं थी | शान्ति निकेतन में कुछ दिन रहने के पश्चात ही उनमे "उत्सर्ग, मैत्री, दूसरो की सहायता करने की वृत्ति, निःस्वार्थ भावना " आदि का विकास होने लगा | भोजन बनाने, कपडे बुनने, पेड़ पौधे लगाने, अपनी परिस्थितियों को सुधारने, अन्य बच्चों की गुप्त रूप से सहायता करने आदि में वें विशेष आनंद लेने लगे | इससे टैगोर जी ने निष्कर्ष निकाला कि विद्यालय का वातावरण बालक के अनुशासन में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करता है | **(2)**

रविन्द्रनाथ टैगोर जी ने विद्यार्थियों के विचारों अनुभूतियों और मूल्यों को प्रत्यक्ष रूप से अनुशासित करने का प्रयत्न ही नहीं किया, बल्कि कल्पनात्मक आधार पर वातावरण और अनुभवों तक क्रियाकलापों को ऐसा रूप दिया जिसके फलस्वरूप बच्चो में अनुकूल अनुक्रिया होती है | वे लिखते है – "बच्चों में प्रकृति के प्रति जो सहज अनुराग होता है और मानवीय वातावरण में पलने वाले सम्बन्धों के प्रति जो संवेदनशीलता होती है, उसे मैंने अपने विद्यालय के बालको में साहित्य, उत्सव-कार्य तथा ऐसे धार्मिक उपदेशो से जाग्रत करने का प्रयत्न किया है, जो संसार से आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करने में समर्थ होती है, और जिससे सारा संसार ही अप्रत्याशित रूप से अपना घर प्रतीत होने लगता है| मैंने अपने बच्चो के लिए ऐसी स्थिति उत्पन्न की थी, जिसमे वें इस संसार में आने पर इसे अपना सच्चा घर समझें| इसके लिए उनके मन में परिश्रम पूर्वक कार्य करने का उत्साह उत्पन्न किया गया था और चरित्र निर्माण करने के लिए रचनात्मक तथा प्रेरणात्मक शक्तियों का उपयोग ऐसे ढंग से कराया जाता था कि वे सब कार्यों में उल्लास पूर्वक योगदान करें" | **(3)**

स्वामी विवेकानंद जी का मानना था कि मनुष्य जीवन के मुख्य रूप से तीन पक्ष होते है | प्राकृतिक, सामाजिक और आध्यात्मिक – स्वामी जी इन तीनो पक्षों को महत्व देते थे, परन्तु सर्वाधिक महत्व आध्यात्मिक पक्ष को देते थे | स्वामी विवेकानन्द जी के अनुसार अनुशासन का अर्थ है अपने व्यवहार में आत्मा द्वारा निर्दिष्ट होना | इनके अनुसार जब मनुष्य अपने प्राकृतिक 'स्व' से प्रेरित होकर कार्य करता है तो हम उसे अनुशासित नहीं कह सकते, जब वह अपने प्राकृतिक 'स्व' पर संयम रखकर सामाजिक 'स्व' से प्रेरित होता है तो हम उसे अनुशासित कह सकते हैं | परन्तु वास्तव में अनुशासित वह

है जो आत्मा से प्रेरित होकर कार्य करता है | स्वामी जी शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों को अनुशासन का उपदेश देते थे | प्रश्न उठता है – बच्चे आत्मानुशासन की स्थिति में कैसे आ सकते हैं ?इस सम्बन्ध में स्वामी जी का अपना मत था कि जब शिक्षक शिक्षार्थियों के सामने आत्मानुशासन का उच्च आदर्श प्रस्तुत करेंगे तो बच्चे भी उनका अनुकरण करेंगे और फिर धीरे-धीरे वैसा सोचने और करने की उन्हें अन्दर से प्रेरणा मिलने लगेगी वे आत्मानुशासन कि ओर बढेंगे | **(4)**

भारत के राष्ट्रपिता एवं भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के अग्रदूत एवं प्रमुख शिक्षा विचारक महात्मा गाँधी जी अनुशासन के महत्व को स्वीकार करते थे | गाँधी जी की दृष्टि से सच्चा अनुशासन आत्मप्रेरित होता है | इस अनुशासन की प्राप्ति के लिए वे दमनात्मक विधि का विरोध करते थे | इनका कहना था कि सच्चे अनुशासन का विकास प्रभावात्मक विधि द्वारा ही किया जा सकता है | गाँधी जी बच्चो को शुद्ध प्राकृतिक वातावरण और उच्च सामाजिक पर्यावरण में रखने पर बल देते थे | गाँधी जी का विश्वास था कि इस प्रकार के पर्यावरण में बच्चे अनुकरण द्वारा उच्च आदर्शों एवं उच्च आचरण को ग्रहण करेंगे | परन्तु यदि फिर भी बच्चे गलत रास्ते पर चलते है तो उन्हें सही रास्ते पर लाने के लिए शिक्षको को अपने आत्मबल का प्रोग करना चाहिए | परन्तु यह आत्मबल यूं ही नहीं आ जाता | इसके लिए शिक्षकों को स्वयं ब्रम्हचर्य जीवन का पालन करना होता है | **(5)**

गाँधी जी का यह कहना था कि जबतक शिक्षक अनुशासित नहीं होगा तबतक बालक अनुशासित नहीं हो सकता और यह अनुशासन वास्तविक होना चाहिए जिसके लिए संयम एवं आत्मनियंत्रण की आवश्यकता है जब शिक्षक में यह गुण विद्यमान रहेगा तो बालक धीरे धीरे उन्हें ग्रहण करता जायेगा और उसमें भी अनुशासन कि भावना जाग्रत होने लगेगी|

श्री अरविन्द जी भारतीय दार्शनिक, विचारक एवं चिन्तक थे | अरविन्द जी कहते है "स्वेच्छा से कर्तव्य पालन करना ही अनुशासन है |"

अरविन्द जी का मानना है शिक्षा के क्षेत्र में भी अनुशासन का बड़ा महत्व होता है | यह अनुशासन कि भावना जागृत कैसे हो ? इस सम्बन्ध में श्री अरविन्द जी के अपने विचार हैं चूंकि अनुशासन का सम्बन्ध वे भावना से जोड़ते थे और इस भावना का सम्बन्ध नैतिकता से है | अरविन्द जी अनुसार प्रत्येक शिक्षक का यह उत्तरदायित्व अथवा कर्तव्य है कि वह बच्चो के मन में ऐसी भावना का विकास करें कि वे अच्छाई की तरफ अग्रसर हो, नैतिकता का पालन करें एवं अध्ययन में एकाग्रता से लगें | इनके विचार अनुसार शिक्षक को बच्चो के साथ प्रेम और सहानुभूति पूर्ण व्यवहार करना चाहिए, कठोरता से वास्तविक अनुशासन की प्राप्ति नहीं की जा सकती | दण्ड को वें अमानवीय कृत्य कहते थे |

इस सन्दर्भ में एक बात और उल्लेखनीय है और वह यह है कि श्री अरविन्द प्रभावात्मक अनुशासन में विश्वास करते थे इनके अनुसार शिक्षको को बच्चो के सामने आदर्श आचरण प्रस्तुत करना चाहिए, जिनका अनुकरण कर बच्चे पहले तो आदर्श आचरण की ओ अग्रसर हो और फिर वैसा करना अपना कर्तव्य समझें | अरविद जी कि दृष्टि से वास्तविक अनुशासन आंतरिक होता है | **(6)**

अन्य दार्शनिको की भांति अरविन्द जी भी आत्मज्ञान को ही सच्चा अनुशासन मानते थे वे आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए योग को प्रमुख साधन मानते थे | उनका कहना था कि बालक कि शक्तियों का विकास इस तरह किया जाये कि वें नैतिकता से परिपूर्ण हो क्योंकि नैतिकता ही अनुशासन का प्रदर्शन है |

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय संस्थापक एवं शिक्षा मनीषी **महामना मदन मोहन मालवीय जी** शिक्षा के क्षेत्र में अनुशासन का होना आवश्यक मानते थे परन्तु मालवीय जी भी अनुशासन का अर्थ आत्मानुशासन से ही लेते थे | दण्ड के भय से स्थापित व्यवस्था को वे अनुशासन नहीं मानते थे | मालवीय जी इस बात पर बल देते थे कि शिक्षक और शिक्षार्थी दोनों को अपने ऊपर स्वयं नियंत्रण रखना चाहिए और मन, वचन व कर्म से शुद्ध होना चाहिए | इनका स्पष्ट मत था कि छात्र तो तभी अनुशासन में रहेंगे जब शिक्षक अनुशासन में रहेंगे अतः आवश्यक है कि शिक्षकों का आचरण अपने में आदर्श एवं अनुकरणीय होना चाहिए आज की भाषा में इस प्रकार स्थापित अनुशासन को प्रभावात्मक अनुशासन कहते हैं | इस प्रकार से अनुशासन स्थापित करने में दण्ड का कोई स्थान नहीं होता |

मालवीय जी स्वयं इतने वर्ष तक शिक्षक रहे, कुलपति रहे परन्तु कभी भी किसी से रुष्ट नहीं हुए | सच्चे अनुशासन कि प्राप्ति के लिए वे नित्य पूजा पाठ और संध्या करने, नियमित रूप से उपवास करने और नियमित जीवन जीना आवश्यक समझते थे | मालवीय जी का विश्वास था कि नित्य पूजा पाठ एवं संध्या करने वाला व्यक्ति स्वभावतः अनुशासित हो जाता है | और जब कभी किसी से जाने अनजाने कोई अनुशासनहीनता हो जाती थी, अपराध हो जाता था तो वे उसे दण्ड नहीं देते थे केवल प्रायश्चित कराते थे | **(7)**

मालवीय जी भी आत्मानुशासन को ही सच्चा अनुशासन मानते थे वे इसकी प्राप्ति के लिए पूजा पाठ तथा उपवास के अत्यधिक महत्व देते थे वे एक धार्मिक व्यक्ति थे उनका कहना था कि आध्यात्मिक जीवन सर्वोत्तम है और इसके माध्यम से हम अपने को पूर्णरूप से नियंत्रित कर सकते हैं |

प्रायः यह देखा जाता रहा है कि वैचारिक दृष्टिकोण के सन्दर्भ में भारत और शेष विश्व में कहीं-कहीं एकरूपता और कहीं-कहीं विरोधाभाष है | संप्रति पूरा विश्व भारतीय चिंतन को पूर्ण या आंशिक रूपसे स्वीकारने लगा है| भारतीय 'योग' तो पूरी दुनिया को प्रभावित कर रहा है | अनुशासन के सम्बन्ध में पाश्चात्य दृष्टिकोण का उल्लेख अनुशासन को व्यापक रूप से समझने में सहयोगी होगा | यह संभव है कि बदलती दुनिया में हम समन्वयवादी सोच से अधिक सुन्दर विश्व कि कल्पना कर सकते हैं | इसी उद्देश्य से प्रस्तुत लेख में हमने पाश्चात्य विचारको के अनुशासन से सम्बंधित विचारों का अध्ययन करके विचारों को संगृहीत किया है | इसका उल्लेख हम यहाँ सुकरात से प्रारंभ कर रहे हैं |

पाश्चात्य दार्शनिक एवं विचारक **'सुकरात'** यूनान (ग्रीस) के निवासी थे सुकरात का मानना था कि व्यक्ति में जबतक अज्ञानता का वास होगा तबतक व्यक्ति अनुशासित नहीं हो सकता इस अज्ञानता को दूर करना ही अनुशासन है | क्योंकि जिस प्राणी को ज्ञान एवं अज्ञान में फर्क अथवा भेद करने का ज्ञान प्राप्त हो जाये तो वह चाहकर भी अज्ञानता के मार्ग पर नहीं जा सकता क्योंकि उन्हें यह पता हो

जाता है कि अज्ञानता हमारे समस्त भावनाओ को संकुचित बना देती है | किन्तु सवाल यह होगा कि ऐसा ज्ञान प्राप्त कैसे किया जाय ? इसके सम्बन्ध में 'सुकरात' कहते हैं कि "इस ज्ञान की प्राप्ति आत्म परीक्षण से होती है |" "अपने को जानो" **(know thyself)** एक ऐसा व्यक्ति जिसको यह ज्ञान हो गया है कि 'जीवन का रहस्य व्यक्ति के बाहर नहीं अन्दर ही छिपा है | व्यक्ति आत्मपरीक्षण अथवा निरीक्षण द्वारा इस रहस्य को जानने का प्रयत्न कर सकता है ' और इस प्रयत्न में सफल होने के बाद यह ज्ञान एवं अज्ञान के भेद को जानने के सक्षम हो जाता है तब वह वास्तव में शिक्षित होता है और वह दूसरों को भी शिक्षित कर सकता है : क्योंकि एक सच्चा ज्ञानी ही एक अज्ञानी को सही दिशा निर्देशित करने में सक्षम होगा | "जो प्रयत्न अपने आप को स्वयं को सही मार्ग निर्देशित करने के साथ-साथ दूसरों को भी सार्थकता का मार्ग निर्देशित करे वही अनुशासन है |"

'सुकरात के अनुसार सदाचार ज्ञान पर आधारित है | कोई भी मनुष्य अपनी इच्छा से गलती नहीं करता | मनुष्य कि गलती ही उसके अज्ञानता का परिणाम है | मनुष्य गलती इस लिए करता है, क्योंकि वह यह जान नहीं पाता कि वह गलती कर रहा है | यदि वह भद्र 'अच्छाई' और अभद्र 'बुराई' का ज्ञान प्राप्त कर ले तो वही सही रहेगा जो भद्र है | सुकरात ने केवल यही नहीं कहा कि भद्र का आधार ज्ञान है वरन यह भी कहा कि ज्ञान ही भद्र है |' **(8)** 'हमारे विचारों से ऐसा ज्ञान जो हमारे व्यवहार को परिवर्तित एवं नियंत्रित करके हमें सार्थक बना दे वही अनुशासन है

पाश्चात्य आदर्शवादी दार्शनिक '**प्लेटो**' के अनुसार "संयम तथा साहस का विकास अभ्यास से होता है | ये दोनों गुण आदतजन्य हैं | प्रारंभिक जीवन के उचित नियंत्रण से ही आदत तथा अभ्यास सम्भव है | आदत एवं अभ्यास के ही आधार पर बुद्धि तत्व विकसित होता है | इस बुद्धि तत्व पर बुद्धिमता एवं न्याय के सदगुण आधारित हैं | शिक्षा द्वारा इन्ही सदगुणों का विकास किया जाता है |" प्लेटो स्पष्ट रूप से कहते हैं कि बुद्धिमत्ता, साहस, संयम एवं न्याय मौलिक गुण है एवं इनमे प्रशिक्षित करने की प्रक्रिया ही शिक्षा है |' **(9)** प्लेटो का कहना है कि जब हममें सदगुणों का विकास होने लगता है : तो वो धीरे-धीरे हमारे व्यवहार को निरपेक्ष रूप से परिवर्तित करके नियंत्रित करने में हमारी सहायता करता है | जब यह पूर्णरूप से नियंत्रित हो जाता है तो हमारे अन्दर अनुशासन की भावना जाग्रत होकर एक रूप ले लेती है |प्लेटो यह मानते थे कि अनुशासित व्यक्ति में स्वार्थ की भावना नहीं हो सकती जो व्यक्ति अनुशासित है वह अपने को एक राष्ट्रवादी होने के साथ-साथ विश्व का नागरिक भी महसूस करता है | बुद्धिमत्ता, साहस, संयम एवं न्याय इन गुणों का मिला जुला रूप है जो अनुशासन की भावना की उत्पत्ति में सहायक होता है|"प्लेटो के अनुसार विवेक ही सामाजिक व्यवस्था की नीव है | यह विवेक प्रत्येक शिशु में सुप्तावस्था में विद्यमान रहता है | अतः शिक्षा का यह भी उद्देश्य है कि इस गुप्त विवेक को जाग्रत किया जाय | विवेक से ही जीवन को नियंत्रित किया जा सकता है | **(10)**

जब हममें जीवन नियंत्रित करने शक्ति आ जाती है | तब हम अपनी भावनाओं को उस दिशा में मोड़ सकते हैं जहाँ से सिर्फ हम नहीं लाखों करोड़ों नहीं बल्कि अनन्त लोग अनन्त का दर्शन अथवा दीदार

करते हैं | जहाँ पे कोई छोटा नहीं जहाँ पे कोई बड़ा नहीं, जहाँ पे कोई अमीर नहीं जहाँ पे कोई गरीब नहीं, जहाँ सिर्फ मानवता ही सबकी पहचान है, अगर अनुशासित है हम तो हमारे लिए सब समान हैं |

प्लेटो कहते हैं कि जीवन में अनेकानेक विरोधी तत्व विद्यमान रहते हैं | इन विरोधी तत्वों को पहचानना एवं इनमें संतुलन स्थापित करना ही अनुशासन है |अनुशासित व्यक्ति ही अपने सामाजिक गतिविधियों को सुचारू रूप से गतिशील बनाने एवं सही दिशा निर्देशित करने में सक्षम अथवा परिपूर्ण होता है |

पाश्चात्य दार्शनिक **'कामेनियस' (COMENIOUS)** ने शिक्षकों को सलाह दी कि वे अपने छात्रों से पुत्रवत व्यवहार करें किन्तु यथासमय यथोचित रूप से कड़े अनुशासन का पालन करें | छात्रों के साथ सहानुभूति और स्नेह का व्यवहार हो किन्तु अवसर आने पर दण्ड देने में भी संकोच न हो | 'दी ग्रेट डिटेक्टिव' में वे लिखते हैं, "छात्रों और शिक्षकों के ध्यान और चौकसी की आवश्यकता है | कोई बुरी प्रवृत्ति बच्चों में आने ही न पाए – इतनी चौकसी तो सम्भव है अतः अनुशासन के द्वारा दुष्प्रवृत्तियों को नियंत्रित रखने के लिए कड़े अनुशासन की आवश्यकता है और यथावसर शारीरिक दण्ड, दोषारोपण आदि का प्रयोग करना ही पड़ेगा | दण्ड को तत्काल देना चाहिए जिससे की बुराई को नियंत्रित किया जा सके |ज्यों ही छात्र कोई गलती करे उसी समय उसे दण्ड दे देना चाहिए जिससे की बुराई जड़ से उखाड़ फेंकी जाय |यहाँ पर यह ध्यान देने की बात है कि कमेनियस ने दण्ड कि बात केवल उन्ही छात्रों के लिए कही है जो गलती करें | उद्देश्य यह है कि वे छात्र आगे गलती ना करें और बुराई से बच सकें |अतः अनुशासन में अध्यापक की पसंद या नापसन्द उसके क्रोध या रूचि, अरुचि का प्रश्न नहीं आना चाहिए | दण्ड इस प्रकार से दिया जाय कि छात्र स्वयं समझ ले कि यह दण्ड उसकी भलाई के लिए है | दण्ड को छात्र डाक्टर कि कड़वी दवा समझ कर सेवन कर लें | वह यह मान ले कि अध्यापक ने पिता के रूप में उसकी भलाई के लिए अनुशासन की व्यवस्था की है | **(11)**

जान डीवी जो एक व्यावहारिकतावादी मनोवैज्ञानिक एवं दार्शनिक थे, जान डीवी का कहना था कि 'शिक्षा' एक सामाजिक प्रक्रिया है, समाज से बाहर, समाज के प्रति कर्तव्यों से विमुख उसका कोई महत्व नहीं | **(12)**जान डीवी कहते हैं जो व्यक्ति समाज में समायोजन करने के साथ-साथ समाज में गतिशीलता लाये तथा सामाजिक गतिविधियों में सामन्जस्य स्थापित करे वास्तव में वह अनुशासित है क्योंकि डीवी मूल्यों को शाश्वत नहीं मानते | यथार्थ भी इनके लिए परिवर्तनशील है | सत्य वही है जो व्यवहार की कसौटी पर खरा उतरे |"समाजोन्मुखी शिक्षा में बालक के सहयोग द्वारा तथा स्कूल के कार्यो द्वारा उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करके हम उसमे आज्ञा पालन, अनुशासन, नियम आदि आवश्यक बातों को चरित्र-निर्माण का अंग बना सकते हैं | सहयोग तथा रूचि पर आधारित शिक्षा में अनुशासन के भंग होने की आशंका ही सम्भव नहीं है | बल का प्रयोग अनुशासन की व्यवस्था में अनुचित है | वैयक्तिक पक्ष को वे सामाजिक पक्ष के सम्मुख झुकाकर अनुशासन की समस्या हल कर देते हैं | प्रजातंत्र में सहयोग, आत्मनिर्भरता समानता इत्यादि की उन्नति होती है | लेविन तथा लिप्पिट के प्रयोगों द्वारा यह बात सिद्ध हो चुकी है | इसलिए ऐसे स्कूलों में, जिनमे प्रजातान्त्रिक समाज का

प्रतिबिम्ब हो, इन गुणों का विकास तथा अनुशासन की स्थापना स्वाभाविक रूप से हो जाती है | **(13)**जान डीवी शिक्षा को व्यावहारिक रूप देना चाहते थे अतः जो अपने व्यवहार को नियंत्रित कर सके वही अनुशासित है अनुशासन के लिए शारीरिक या मानसिक दण्ड की आवश्यकता नहीं बल्कि अनुशासन के लिए प्रेम**,** सहानुभूति तथा परिवर्तन की आवश्यकता है | एक ऐसा व्यक्ति जिसमें अनुशासन की भावना जागृत है वह बालक या बड़े को प्रेम पूर्वक कुछ भी सिखा सकता है तथा दूसरों से सीख भी सकता है | अनुशासित रूप से शिक्षित मनुष्य बालक की बातों की अवहेलना नहीं करता बल्कि उसमें संशोधन एवं सुधार करता है |**"**डीवी के लिए स्कूल में शिक्षक बालक को समाजोन्मुख करने के लिए एक विशेष व्यक्ति है | वह समाज का प्रतिनिधि है | पर उसे केवल निरिक्षण करने, सहयोग देने तथा बालक को उत्साहित-मात्र करने का अधिकार है, उस पर अपने विचार लादने का नहीं | बालक की रूचि, उसके सुझाव उसकी आवश्यकताएं ही शिक्षक के सम्मुख रहनी चाहिए | बालकों का कार्य क्षेत्र से बाहर न जाय तो अनुशासन कायम रहे | **(14)**डीवी कहते हैं कि इस परिवर्तनशील समाज में जो अपने को समायोजित कर सके और सामाजिकता को अपने अनुकूल कर सके वही अनुशासित है | **"**स्वतंत्रता पर नियंत्रण रखकर स्वतंत्र रहना ही अनुशासन है |''

भारतीय एवं पाश्चात्य विचारक, दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक एवं चिन्तक वे सभी लोग अनुशासन की भावना जाग्रत करने में बालक के जीवन में शिक्षक को विशेष महत्व देते हैं लेकिन इनका मानना यह भी है कि बालक के जीवन में अनुशासन की भावना जाग्रत करने में तबतक वे पूर्ण रूप से सफल नहीं हो सकते जबतक शिक्षक स्वयं अनुशासित नहीं है | भारतीयों का मानना है कि अनुशासन से आत्मा की उन्नति होती है परन्तु वे आत्मानुशासन को ही वास्तविक अनुशासन मानते हैं | वाह्य अनुशासन अथवा दमनात्मक अनुशासन का कोई महत्व नहीं क्योंकि बालक या बड़ो में जब आत्मानुशासन की भावना उत्पन्न हो जाएगी तो वह वही करेगा जो स्वयं के लिए भी अच्छा हो तथा इससे कहीं अधिक दूसरों के लिए भी अच्छा है |

भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टि में अनुशासन का विशेष महत्व है वे सभी शिक्षा के साथ-साथ जीवन के पक्ष में भी अनुशासन के महत्व को स्वीकार करते हैं| अनुशासन के लिए अधिकतर लोग दण्ड के विरोधी हैं किन्तु कुछ लोग दण्ड को भी स्वीकार करते हैं **(**कामेनियस**)** हालांकि वे भी दण्ड को सिर्फ बुराइयाँ ख़त्म करने के लिए ही प्रयोग करने की बात करते हैं |

हमारा विचार है कि, **"**अनुशासन एक ऐसी भावना है जो कुछ अनुकरण करके और कुछ आत्मज्ञान द्वारा उत्पन्न होता है | कुछ लोगों में यह भावना उत्पन्न तो होती है किन्तु यह सुप्तावस्था में रह जाती है और कुछ लोगों में यह भावना उत्पन्न होके एक विराट रूप धारण कर लेती है | जिन लोगों में यह भावना सुप्तावस्था में होती है वे अहंकारी एवं घमण्डी होते है हालांकि ज्ञान उनमें भी होता है, किन्तु जिन लोगों में अनुशासन की भावना का विराट रूप विद्यमान है वे एक ज्ञानी या महान ज्ञानी होकर भी अपने को सदा साधारण ही समझते हैं, सब कुछ जानते हुए भी उनमें खामोशियाँ बनी रहती हैं |

वे दिखावटी पन से दूर रहते हैं, जो लोग अनुशासित हैं वे हर परिस्थिति में मुस्कुराते रहते हैं तथा अपने मार्ग से कभी विचलित नहीं होते |"

सन्दर्भ : -

1. लाल, रमन बिहारी: शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ - 2015-16, पृष्ठ – 296 – 97
2. ओड़, लक्ष्मीलाल के: शिक्षा के दार्शनिक पृष्ठभूमि, राजस्थान हिंदी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर – 2014, पृष्ठ – 235
3. वही, पृष्ठ – 235 – 36
4. लाल, रमन बिहारी: शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धांत रस्तोगी पब्लिकेशन मेरठ - 2015-16, पृष्ठ – 333 – 34
5. वही, पृष्ठ - 348 – 49
6. वही, पृष्ठ – 370 – 71
7. वही, पृष्ठ – 314 – 15
8. पाण्डेय, रामशकल विश्व के श्रेष्ठ शिक्षा – शास्त्री, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा – 1994-95, पृष्ठ – 5
9. वही, पृष्ठ – 15 – 16
10. वही, पृष्ठ - 16
11. वही, पृष्ठ – 46 - 47
12. वही, पृष्ठ – 129
13. वही, पृष्ठ – 132
14. वही, पृष्ठ – 132